ॐ

वैदिकदशशान्तिमन्त्राः

राष्ट्रभाषानुवादसमलङ्कृताः

संग्रहकर्ताऽनुवादकश्च

वेदान्त-सर्वदर्शनाचार्यमहामण्डलेश्वरः

स्वामी विद्यानन्दगिरिजीमहाराजः

ॐ

वैदिकदश-शान्तिमन्त्राः

राष्ट्रभाषानुवादसमलङ्कृताः

संग्रहकर्ताऽनुवादकश्च

वेदान्त-सर्वदर्शनाचार्यमहामण्डलेश्वरः

स्वामी विद्यानन्दगिरिजीमहाराजः

सम्पादकः

सर्वदर्शनशास्त्री, वेदान्ताचार्यः

ब्रह्मचारी रामानन्दः

प्रकाशक:

कैलाश विद्या प्रकाशन

प्रति — दश हजार

वि० सम्वत् २०५१ मूल्य: नित्य पाठ

ग्रन्थ प्राप्ति स्थान –

श्री कैलास आश्रम, मुनिकीरेती, ऋषिकेश-२४९२०१
श्री दशनाम संन्यास आश्रम, भूपतवाला,
हरिद्वार - २४९४०१
श्री कैलास आश्रम, उजेली, उत्तरकाशी-२४९१९३
श्री राम आश्रम, सामानामण्डी, पटियाला-१४७१०१
श्री कैलास आश्रम, कैलास आश्रम मार्ग,
माडल टाउन, रोहतक - १२४००१ (हरियाणा)
श्री ५३/१७ राधाकृष्ण मन्दिर, पुराना राजेन्द्रनगर,
नई दिल्ली-११००६०

यति-पूजन-मन्त्राः

नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्रमूर्तये,
सहस्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे ।
सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते,
सहस्रकोटियुगधारिणे नमः ॥ १ ॥

नमः कमलनाभाय नमस्ते जलशायिने ।
नमस्ते केशवानन्त वासुदेव नमोऽस्तुते ॥ २ ॥

वासनाद्वासुदेवस्य वासितं भुवनत्रयम् ।
सर्वभूतनिवासोऽस्ति वासुदेव नमोऽस्तुते ॥ ३ ॥

आकाशात्पतितं तोयं यथा गच्छति सागरम् ।
सर्वदेवनमस्कारः केशवं प्रतिगच्छति ॥ ४ ॥

शङ्करं शङ्कराचार्यं केशवं बादरायणम् ।
सूत्रभाष्यकृतौ वन्दे भगवन्तौ पुनः पुनः ॥ ५ ॥

ईश्वरो गुरुरात्मेति मूर्तिभेदविभागिने ।
व्योमवद्व्याप्तदेहाय दक्षिणामूर्तये नमः ॥ ६ ॥

अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् ।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ ७ ॥

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः ।
गुरुः साक्षात्परं ब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ ८ ॥

दो शब्द

वैदिकसम्प्रदाय परम्परामें अध्ययन के प्रारम्भ और समाप्ति में वैदिकदश-शान्तिमन्त्रोंका पाठ विघ्नविघात और अधीतविद्या की अभिवृद्धि के लिए किया जाता है। उनका संक्षेप में इस प्रकार निर्देश मिलता है। यथा—

शन्नो-सह-यश्छा-हं वृक्ष पूणमदा-प्यय:।
वाङ् भद्रं-नो-भद्रं-यो ब्रह्मा-न विश्वमित्यपि ॥

अत: उपनिषदादि वैदिकग्रन्थों के अध्ययन में इन शान्तिमन्त्रों का पाठ अवश्य करना ही चाहिए।

सर्वसामान्य की सुविधा के लिए यह आवश्यक था कि संक्षिप्त अर्थ सहित वैदिक-दशशान्ति-मन्त्रों को एक छोटी पुस्तिका के आकार में प्रकाशित कराया जाय। इसके लिए आचार्य प्रवर श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रोत्रियब्रह्मनिष्ठ सकल शास्त्र-निष्णात महामण्डलेश्वर अनन्त श्रीस्वामी चैतन्य-गिरिजी महाराज (शास्त्री जी) का आदेश हमें प्राप्त हुआ।

फलतः वैदिक-दशशान्ति-मन्त्रों को पुस्तकाकार रूप में पाठकों के सामने हम उपस्थित कर रहे हैं। अतः इससे होने वाले लाभ को पाठकगण परम पूज्य श्रीमहाराजजी की ही असीमानुकम्पा समझें।

इत्यों शम् — भगवत्पादीयः
ऋषि पंचमी — महामण्डलेश्वर
सं० २०२७ वि० — **स्वामी विद्यानन्दगिरि**

ईश प्रार्थना

करुणानिधे ! प्रभो ! नो, दोषं क्षमस्व भगवन् !
सुचिरात् प्रसुप्तदेशं, परिबोधयाशु भगवन् ! ॥ १ ॥
भुवि भूतसर्वभाषा परिपूरिताभिलाषा।
श्वसितीव देवभाषा, तां पालयस्व भगवन् ! ॥ २ ॥
आसीत् कदाचिदेषा, वाणी विशुद्ध-वेषा।
अधुनापि नामशेषा, तामाश्रयस्व भगवन् ! ॥ ३ ॥
देशे स्वतन्त्रतायाः प्राचीनसभ्यतायाः।
समयं समर्घतायाः पुनरानयस्व भगवन् ! ॥ ४ ॥

वैदिकदशशान्तिमन्त्राः

राष्ट्रभाषानुवाद-समलङ्कृताः

ॐ शं नो मित्रः शं वरुणः। शं नो भवत्वर्यमा। शं न इन्द्रो बृहस्पतिः शं नो विष्णुरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे। नमस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म वदिष्यामि। ऋतं वदिष्यामि। सत्यं वदिष्यामि। तन्मामवतु। तद्वक्तारमवतु। अवतु माम्। अवतु वक्तारम्॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥ १॥

(कृष्ण-यजुर्वेद-तैत्ति० १।१।१)

मित्र (प्राणवृत्ति और दिनका अभिमानी देव) हमारे लिए सुखरूप हो। अपानवृति और रात्रिका अभिमानी देव) वरुण हमारे लिए सुखप्रद हो। (नेत्र और सूर्यका अभिमानी) अर्यमा हमारे लिए सुखावह

हो। (बलाभिमानी) इन्द्र तथा (वाणी और बुद्धिका अभिमानी) बृहस्पति हमारे लिए शान्तिवाहक हो और विस्तृत पादवाला (पादाभिमानी) विष्णुदेवता सुखदायक हो (समस्त कर्मों का फल वायु के अधीन होने से) ब्रह्मरूप वायुको नमस्कार है। हे वायो ! तुम्हें नमस्कार है। तुम्हीं प्रत्यक्ष ब्रह्मरूप हो। अतः मैं तुम्हीं को प्रत्यक्ष ब्रह्म कहूँगा। तुम्हीं को (शास्त्र एवं स्वकर्तव्यानुसार निश्चित अर्थ रूप) ऋत कहूँगा और (शरीर-वाणी से सम्पादन किए जानेवाले कार्यरूप) सत्य भी मैं तुम्हीं को कहूँगा। अतः आप (मुझ विद्यार्थी को विद्या प्रदान कर) मेरी रक्षा करो ! वक्तृत्व सामर्थ्य प्रदान कर) ब्रह्म के निरूपण करने वाले आचार्य की भी रक्षा करो, मेरी रक्षा करो एवं वक्ता की रक्षा करो। त्रिविधतापकी शान्ति हो ॥ १ ॥

ॐ सह नाववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहै॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥ २ ॥

(कृष्ण-यजुर्वेद-तैत्ति० २।१।१)

वह परमात्मा हम (आचार्य और शिष्य एवं वक्ता और श्रोता) दोनों की साथ-साथ रक्षा करे। हम दोनोंका साथ-साथ पालन करे। हम दोनों साथ-साथ विद्याजन्य सामर्थ्यका सम्पादन करें। हम दोनों का अधीत (ज्ञान) तेजस्वी हो और हम (कभी भी परस्पर) विद्वेष न करें। त्रिविधतापकी शान्ति हो ॥२॥ का० संहितो०

ॐ यश्छन्दसामृषभो विश्वरूपः। छन्दोभ्योऽध्यमृतात्संबभूव। स मेन्द्रो मेधया स्पृणोतु। अमृतस्य देव! धारणो भूयासम्। शरीरं मे विचर्षणम्। जिह्वा मे मधुमत्तमा। कर्णाभ्यां भूरि विश्रुवम्। ब्रह्मणः कोशोऽसि मेधया पिहितः। श्रुतं मे गोपाय॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥ ३ ॥

(कृष्ण-यजुर्वेद-तैत्ति० १।४।१)

जो (प्रणव) वेदोंमें (श्रेष्ठ होने के कारण ऋषभ और (सम्पूर्ण वाणी में व्याप्त होने के कारण) सर्वरूप है तथा वेदरूप अमृतसे प्रधान रूप में प्रादुर्भूत हुआ

है, वह ओंकार (सम्पूर्ण कामनाओं का स्वामी होने से) परमेश्वर मुझे मेधा द्वारा प्रसन्न या सबल करे। हे देव! मैं अमृतत्व (के हेतुभूत ब्रह्मज्ञान) को धारण करनेवाला होऊँ तथा मेरा शरीर योग्य हो। मेरी जिह्वा अतिशय मधुर भाषिणी हो। मैं कानों से अधिक मात्रा में श्रवण करूँ। हे प्रणव! तू ब्रह्मका कोश है, (क्योंकि तुझमें ब्रह्मकी उपलब्धि होती है) और तू लौकिक बुद्धि से ढका हुआ है (इसीलिए सामान्य बुद्धिवाले पुरुषको तेरे तत्त्व का ज्ञान नहीं होता, मेरे सुने हुए आत्मविज्ञानादि की रक्षा करो। त्रिविधतापकी शान्ति हो ॥ ३ ॥

ॐ अहं वृक्षस्य रेरिव। कीर्तिः पृष्ठं गिरेरिव। ऊर्ध्वपवित्रो वाजिनीव स्वमृतमस्मि। द्रविणं सवर्चसम्। समेधा अमृतोऽक्षितः। इति त्रिशङ्कोर्वेदानुवचनम् ॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥ ४ ॥

(कृष्ण-यजुर्वेद-तैत्ति० १।१०।१)

(अन्तर्यामी रूपसे) मैं संसारूप वृक्षका प्रेरक हूँ, मेरी प्रसिद्धि पर्वत-शिखर के समान ऊँची है।(ज्ञान प्रकाशित होने योग्य पवित्र परब्रह्मरूप कारण वाला होने से) मैं ऊर्ध्व पवित्र हूँ। अन्नवान् सूर्य के समान मैं विशुद्ध अमृतमय हूँ। मैं दीप्तिमान् (आत्मतत्त्वरूप धन, सुन्दर मेधावाला, अमरणधर्मा तथा अव्यय हूँ या अमृत से सिक्त हूँ, यह त्रिशंकुऋषिका (आत्मैकत्व-विज्ञान प्राप्ति के अनन्तर होनेवाला) वेदानुवचन है ॥४॥

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥ ५ ॥ शु. यु. ईश.

ॐ वह (निरुपाधिक परब्रह्म) पूर्ण है और यह (सोपाधिक कार्यब्रह्म भी) पूर्ण है, क्योंकि पूर्णसे पूर्ण आविर्भूत हुआ है। (तथा तत्त्व साक्षात्कारके समय एवं प्रलय-काल में) पूर्ण (सोपाधिक कार्यब्रह्म) के पूर्णत्वको

लेकर (अर्थात् अपने में लीन करके) पूर्ण निरुपाधिक ब्रह्म) ही शेष बचा रहता है। त्रिविधतापकी शान्ति हो ॥५॥

ॐ आप्यायन्तु ममाङ्गानि वाक् प्राणश्चक्षुः श्रोत्रमथो बलमिन्द्रियाणि च। सर्वाणि सर्वं ब्रह्मोपनिषदं माहं ब्रह्म निराकुर्यां मा मा ब्रह्म निराकरोदनिरा-करणमस्त्वनिराकरणं मे अस्तु। तदात्मनि निरते य उपनिषत्सु धर्मास्ते मयि सन्तु ते मयि सन्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥६॥

(सामवेद केन-छान्दोग्य-उपनिषत्)

मेरे अङ्ग पुष्ट होवें, मेरे वाक्, प्राण, चक्षु, श्रोत्र, बल और सम्पूर्ण इन्द्रियाँ पुष्ट (ब्रह्मबोधके योग्य) होवें। यह सब (दृश्यमान जगत्) उपनिषद् वेद्य ब्रह्म ही है। मैं ब्रह्मका निराकरण न करूँ और ब्रह्म मेरा निराकरण न करे (अर्थात् मैं ब्रह्मको सदा आत्मभावेन साक्षात् करूँ, उससे कभी भी विमुख न होऊँ और इसके लिए

सर्वान्तर्यामी परमात्मा मुझे बल दे ! वह मेरा त्याग न करे)। इस प्रकार हमारा परस्पर अनिराकरण हो, अनिराकरण हो । उपनिषदों में जो धर्म हैं, वे आत्मबोध में लगे हुए मुझ साधक में होवें। वे सब मुझमें होवें। त्रिविधताप की शान्ति हो ॥ ६ ॥

ॐ वाङ् मे मनसि प्रतिष्ठिता, मनो मे वाचि प्रतिष्ठितमाविरावीर्म एधि। वेदस्य म आणीस्थः श्रुतं मे मा प्रहासीरनेनाधीते-नाहोरात्रान्संदधाम्यृतं वदिष्यामि ! सत्यं वदिष्यामि। तन्मामवतु। तद्वक्तारमवतु। अवतु माम्। अवतु वक्तारमवतु वक्तारम् ॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥ ७ ॥ ऋग्वेदः

मेरी वाणी, मनमें प्रतिष्ठित हो और मन, वाणी में प्रतिष्ठित हो (अर्थात् मन जैसा निश्चय करे, वाणी वैसे ही बोले और जैसा वाणी से बोले मनसे वैसे ही चिंतन हो, दोनों परस्पर अनुकूल रहें)। हे परमात्मन् ! तुम मेरे सामने प्रकट हो जाओ, हे वाक् और मन ! मेरे प्रति वेदको लाओ, मेरा श्रवण किया हुआ मुझे न त्यागे, अधीत शास्त्रों के द्वारा मैं दिन

रात को एक कर दूँ — अर्थात् दिन-रात अध्ययन चलता रहे। मैं वाचिक सत्यका भाषण करूँ और मानसिक सत्यको ही बोलूँ। वह ब्रह्म मेरी रक्षा करे और वह वक्ता की रक्षा करे, वह मेरी रक्षा करे और वक्ता की रक्षा करे, वक्ता की रक्षा करे। त्रिविधताप की शान्ति हो ॥७॥

ॐ भद्रं नो अपिवातय मनः ॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥८॥ ऋग्वेदः

हे परमात्मन् हमारे मनको कल्याण स्वरूप सदाशिवकी ओर अथवा नित्य आनन्दकी ओर ही लगाओ। त्रिविधतापकी शान्ति हो ॥८॥

ॐ भद्रं कर्णेभिः श्रृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवांसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥९॥ (अर्थवेद-प्रश्न-उपनिषत्)

हे देवताओं ! (आपकी कृपा से हम) कानों के द्वारा कल्याणप्रद शब्द ही सुनें, आँखों से कल्याणप्रद दृश्य देखें, वैदिक यागादिक कर्म में हम समर्थ होवें तथा दृढ़ अवयवों और शरीरों से स्तुति करनेवाले हम लोग केवल देवताओं के हितमात्र के लिए जीवन धारण करें। महान् यशस्वी इन्द्रदेव हमारा कल्याण करें, परम ज्ञानवान् पूषादेव हमारा कल्याण करें, सम्पूर्ण आपत्तियों के लिए चक्र के समान घातक गरुड़ हमारा कल्याण करें तथा देवगुरु बृहस्पति हमारा कल्याण करें, त्रिविधताप की शान्ति हो ॥ ९ ॥

ॐ यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै। तं ह देवमात्मबुद्धिप्रकाशं मुमुक्षुर्वै शरणमहं प्रपद्ये ॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥ १० ॥

(यजुर्वेद० श्वेताश्वतर-उपनिषत्० ६/१८)

जिसने सृष्टि के प्रारम्भ में हिरण्यगर्भ को उत्पन्न किया और जो उस ब्रह्मा के लिए वेदों को प्रवृत्त कराता है। अपने बुद्धि के प्रकाशक उस परमात्मदेव की मैं

(मुमुक्षुगण) शरण ग्रहण करता हूँ। त्रिविधतापकी शान्ति हो ॥ १० ॥

ॐ नमो ब्रह्मादिभ्यो ब्रह्मविद्यासम्प्रदाय कर्तृभ्योवंशर्षिभ्यो महद्भ्यो नमो गुरुभ्यः। सर्वोपप्लवरहितः प्रज्ञानघनः प्रत्यगर्थो ब्रह्मैवाहमस्मि।

ब्रह्मा, विष्णु, रुद्रादि-देवों को, वेदान्तविद्या सम्प्रदायके प्रवर्तक आचार्यों को, अपने परम्परागत ऋषियों को नमस्कार है। बड़े-बड़े वेदान्ततत्त्व के वेत्ताओं के प्रति और नारायण से लेकर अस्मदादि गुरुओं के प्रति भूरिशः नमस्कार है। सर्व प्रपञ्चात्मक व्यष्टि-समष्टि उपाधियों से शून्य चिन्मात्र स्वरूप अन्तरात्मा त्वंपदका लक्ष्यार्थ तथा ब्रह्मशब्दका लक्ष्यार्थ एक ही है और वही मैं हूँ ॥

ॐ विश्वं दर्पणदृश्यमाननगरीतुल्यं निजान्तर्गतं पश्यन्नात्मनि मायया बहिरिवोद्भूतं यथा निद्रया। यःसाक्षात्कुरुते प्रबोधसमये स्वात्मानमेवाद्वयं तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं श्रीदक्षिणामूर्तये ॥

ॐ नारायणं पद्मभवं वसिष्ठं शक्तिं च तत्पुत्रपराशरं च। व्यासं शुकं गौडपदं महान्तं गोविन्द-योगीन्द्रमथास्य शिष्यम् ॥ २ ॥ श्रीशङ्कराचार्यमथास्य पद्मपादं च हस्तामलकं च शिष्यम्। तं तोटकं वार्तिककारमन्यानस्मद्गुरून्सन्ततमानतोऽस्मि ॥ ३ ॥ श्रुतिस्मृतिपुराणानामालयं करुणालयम्। नमामि भगवत्पादं शङ्करं लोकशङ्करम् ॥ ४ ॥ शङ्करं शङ्कराचार्यं केशवं बादरायणम्। सूत्रभाष्यकृतौ वन्दे भगवन्तौ पुनः पुनः ॥ ५ ॥ ईश्वरो गुरुरात्मेति मूर्तिभेदविभागिने। व्योमवद्व्याप्तदेहाय दक्षिणामूर्तये नमः ॥ ६ ॥ अशुभानि निराचष्टे तनोति शुभसन्ततिम्। स्मृतिमात्रेण यत्पुंसां ब्रह्म तन्मङ्गलं परम् ॥ अतिकल्याण-रूपत्वान्नित्यकल्याणसंश्रयात्। स्मर्तॄणां वरदात्वाच्च ब्रह्म तन्मङ्गलं विदुः ॥ ओंकारश्चाथशब्दश्च द्वावेतौ ब्रह्मणः पुरा। कण्ठं भित्वा विनिर्यातौ तस्मान्माङ्गलिकावुभौ तस्मान्माङ्गलिकावुभाविति ॥ यैरिमे गुरुभिः पूर्वं पदवाक्यप्रमाणतः। व्याख्याताः सर्ववेदान्तास्तान्नित्यं प्रणतोऽस्म्यहम् ॥

ॐ शान्तिः ! शान्तिः !! शान्तिः !!!